पुस्तक समीक्षा

विद्यालय में समाज

पुस्तक – *विद्यालय में समाज*
प्रकाशक – राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
प्रकाशन वर्ष – 2023 (शक 1945)
मूल्य – ₹ 285

सुमित गंगवार*

'विद्यालय में समाज' पुस्तक विद्यार्थियों के ज्ञान, समझ, कौशल एवं मूल्य निर्माण में विद्यालयी परिवेश तथा वास्तविक जीवन से जुड़े क्रियाकलापों की भूमिका का महत्व बताते हुए सार्थक अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करती है। लेखक ने इस पुस्तक में विद्यालय पारिस्थितिकी में वैध और आधिकारिक ज्ञान के रूप में पढ़ाने हेतु स्वीकृत सामग्री, पठन-पाठन के शिक्षणशास्त्रीय विश्वास तथा प्रतिमान, शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का प्रभाव, विद्यार्थियों के दैनिक जीवन से जुड़े अनुभवों एवं ज्ञान की विशेषताओं तथा सामाजिक रूपांतरण हेतु विद्यार्थियों को आलोचनात्मक चिंतन के अवसरों की प्राप्ति जैसे बिंदुओं को संबोधित किया है। यह पुस्तक विद्यालय में सीखने-सिखाने की एक जटिल प्रक्रिया को सरलता से समझाने का भी प्रयास करती है।

इस पुस्तक में कुल छह अध्याय हैं, जिनकी रचना विद्यालय के संस्थानीकृत परिवेश, *'किस तरह के समाज में हम रह रहे हैं और किस तरह के समाज की परिकल्पना हम करते हैं'* जैसी आधारभूत मान्यता पर की गई है। यह पुस्तक समाज तथा विद्यालय के आपसी संबंधों पर प्रकाश डालती है। लेखक ने पुस्तक की 'भूमिका' में पुस्तक की समग्र विषयवस्तु का संक्षिप्त विवरण देते हुए, कई सार्थक प्रश्नों पर ध्यान आकर्षित किया है। इस पुस्तक के अध्ययन से पाठकों को विद्यालयी शिक्षण-अधिगम तथा इसमें समाज के सक्रिय हस्तक्षेप जैसे जटिल विमर्श को समझने में सहायता प्राप्त होगी।

पुस्तक के पहले अध्याय 'समाज में विद्यालय' में समाज तथा विद्यालय के अंतर्संबंधों की विस्तृत व्याख्या की गई है। इस अध्याय में समाज द्वारा विद्यालय से जुड़ी अपेक्षाओं को प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त इस अध्याय में विद्यालयी अधिगम से जुड़े सामाजिक मिथकों, जैसे — वयस्कों की तुलना में अपरिपक्व होने के कारण बच्चों को सिखाना चुनौतीपूर्ण है, 'सीखने की प्रक्रिया में विद्यार्थी की छवि निरपेक्ष पहचान वाली होती है' आदि को विश्लेषित कर प्रस्तुत किया गया है। साथ ही, इनसे जुड़ी वास्तविकता के समीप पहुँचने का सफल प्रयास करते हुए यह बताया गया है कि

* *सहायक आचार्य*, शिक्षणशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश 226007/नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली 110070

विद्यार्थियों की सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक पृष्ठभूमि, कक्षागत शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। इस अध्याय का निष्कर्ष इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि यदि विद्यालय में ज्ञान के संस्थानीकरण की प्रक्रिया में शिक्षार्थी के अनुभवजन्य ज्ञान की उपेक्षा की जाती है, तो ऐसी स्थिति में अधिगम की प्रक्रिया बोझिल हो जाती है, जिससे विद्यालय सामाजिक यथास्थिति का पुनरुत्पादन करने का यंत्र मात्र बनकर रह जाता है।

पुस्तक के दूसरे अध्याय 'ज्ञान पाठ्यचर्या और पुस्तकें' में लेखक स्पष्ट करता है कि एक अध्यापक को कक्षा शिक्षण के दौरान पाठ्यपुस्तकों का उपयोग एक ऐसे साधन के रूप में करना चाहिए, जिनकी सहायता से विद्यार्थियों में सीखने की तत्परता विकसित की जा सके। अतः पाठ्यपुस्तकों को शिक्षणशास्त्रीय माध्यम के रूप में ज्यों का त्यों स्वीकार न करके उपयोग से पूर्व इनकी विषयवस्तु का आलोचनात्मक मूल्यांकन अनिवार्य रूप से करना चाहिए। लेखक ने इस अध्याय में कक्षा आठ के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2006 में प्रकाशित पुस्तक *संसाधन और विकास* की विषयवस्तु का विश्लेषण किया है। विषयवस्तु विश्लेषण से प्राप्त परिणाम के माध्यम से लेखक ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि इस पाठ्यपुस्तक में तथ्यों और संप्रत्ययों की तुलना में दैनिक ज्ञान से जुड़े अनुभवों को कम स्थान दिया गया है। इसके साथ ही, विषय संबंधी ज्ञान की प्रस्तुति में संदर्भ निरपेक्षता भी एक चुनौती है। इस पाठ्यपुस्तक के प्रत्येक पाठ के आरंभ में विभिन्न गतिविधियाँ दी गई हैं। ये गतिविधियाँ विद्यार्थियों को एक सचेत अभिकर्ता मानते हुए ज्ञान निर्मिति की प्रक्रिया में उनके दैनिक जीवन से जुड़े ज्ञान को बढ़ाती हैं। पुस्तक में वैज्ञानिक शब्दों के द्वारा अनुभाविक दुनिया को विषय ज्ञान में प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास किया गया है। पाठ्यपुस्तक में प्रस्तुत 'दुनिया' यथासंभव वास्तविक दुनिया का प्रतिनिधित्व करती है। इस अध्याय के अंत में लेखक इस बात की ओर संकेत करता है कि एक शिक्षणशास्त्रीय उपकरण के रूप में पाठ्यपुस्तक का चयन एवं उपयोग करते समय अध्यापकों को इनका आलोचनात्मक मूल्यांकन करने के साथ-साथ यह भी तय करना होगा कि कक्षा में ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया में विद्यार्थियों के साथ पाठ्यपुस्तक का उपयोग उचित प्रकार से किया जाए।

पुस्तक के तीसरे अध्याय 'शिक्षा संस्थानों में अधिगम संस्कृति' में लेखक ने इस प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयास किया है कि कक्षा-शिक्षण तथा अध्यापक के शिक्षणशास्त्रीय निर्णयों एवं युक्तियों के चयन पर विद्यार्थियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का क्या प्रभाव पड़ता है? इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए उन्होंने दो अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक वर्गों (एक सरकारी तथा एक निजी विद्यालय) के विद्यार्थियों के कक्षागत अनुभवों का व्यष्टि अध्ययन (केस स्टडी) किया। इस व्यष्टि अध्ययन द्वारा लेखक ने पाया कि कक्षा में क्या? क्यों? और कैसे? पढ़ाया जाएगा, इसके निर्धारण में विद्यार्थियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। साथ ही, शिक्षण प्रक्रिया में अध्यापक अपने अनुभवों और विद्यार्थियों के अनुभवों को समाज के पूर्व निर्धारित परंपरागत ढांचों में भी देखता है।

पुस्तक के चौथे अध्याय 'विद्यार्थियों की अनुभाविक दुनिया' में विद्यार्थियों की अनुभवजन्य जगत की विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है। इस अध्याय में लेखक ने विद्यालयेतर भौतिक तथा सामाजिक जगत में बच्चों की संलग्नता की विशेषताओं तथा सामाजिक यथार्थ के प्रति उनके प्रत्यक्षीकरण को स्पष्ट किया है। विद्यार्थियों के विद्यालयेतर अनुभवों का अन्वेषण करने के लिए लेखक दिल्ली महानगर के निम्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि वाले परिवारों के बच्चों को अध्ययन बिंदु (केस इन पॉइंट) के रूप में सम्मिलित करता है। इस दौरान लेखक चयनित बच्चों, उनके अभिभावकों तथा उनके दोस्तों से इन बच्चों की परिवार में दैनिक सहभगिता की प्रकृति को जानने के लिए बातचीत भी करता है। इन सबके प्रतिफल में लेखक यह पाता है कि विद्यार्थियों की विद्यालयेतर भौतिक तथा सामाजिक परिस्थितियाँ उन्हें नवीन ज्ञान सीखने के लिए विभिन्न अवसर एवं चुनौतियाँ प्रदान करती हैं। ये अवसर एवं चुनौतियाँ विद्यार्थियों के विचारों, पहचानों तथा क्रियाओं की पुनर्रचना करती हैं। विद्यार्थियों की अनुभाविक जगत में विभिन्न विद्यालयेतर गतिविधियाँ प्रभावी दखल देती हैं। परिवार, समुदाय, हमउम्र साथी, लोकप्रिय सांस्कृतिक माध्यम इत्यादि से जुड़े विमर्श दैनिक ज्ञान के निर्माण में सर्वाधिक भूमिका निभाते हैं। साथ ही, परिवार की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा उनके द्वारा अपनाए जाने वाले मूल्यों, रीतियों और परंपराओं के द्वारा भी विद्यार्थी अपने दैनिक जीवन से जुड़े ज्ञान का निर्माण करते हैं। इस अध्याय के अंत में लेखक यह स्पष्ट करता है कि सामाजिक यथार्थ के प्रति विद्यार्थियों के परिप्रेक्ष्य को कक्षा में चर्चा की सामग्री के रूप में उपयोग कर एक ऐसा शैक्षिक परिवेश विकसित करना चाहिए, जहाँ सबका प्रतिनिधित्व, सभी प्रकार का ज्ञान और सबके उद्देश्य समावेशित हों।

पुस्तक के पाँचवें अध्याय 'ज्ञान का सहनिर्माण' में लेखक ने उन शिक्षणशास्त्रीय युक्तियों की चर्चा की है, जिनके माध्यम से बच्चों के दैनिक जीवन से जुड़े ज्ञान तथा विद्यालयी ज्ञान के आपसी संबंध को संवर्धित करने के लिए उन्हें समाज के यथार्थ पर बातचीत तथा चिंतन करने के अवसर प्रदान किए जाएँ। इस अध्याय में लेखक स्पष्ट करता है कि विद्यालय की कक्षा वास्तव में शिक्षार्थियों के समुदाय के रूप में कार्य करती है। इसलिए सीखना वैयक्तिक प्रक्रिया न होकर एक साझी सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया है, जिसमें विद्यार्थी अपने अनुभवजन्य ज्ञान द्वारा पाठ्यपुस्तकीय विषयवस्तु से भिन्न घटनाओं पर चर्चा कर अपने ज्ञान का संवर्धन करते हैं। इसलिए अध्यापक को कक्षा की शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थियों को जोड़कर उन्हें स्वयं के दैनिक अनुभवों को प्रस्तुत करने, तर्क करने, प्रमाण देने, विचारों की परस्पर तुलना करने के अवसर प्रदान करने जैसी शिक्षणशास्त्रीय युक्तियों को अपनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त अध्यापकों को विद्यार्थियों के विचारों, उनके संदर्भजनित ज्ञान एवं यथार्थ को कक्षा में आमंत्रित कर ज्ञानानुशासन विधियों के रूप में उपयोग करना चाहिए। पाँचवें अध्याय के अंत में लेखक इस तथ्य को भी उजागर करता है कि कक्षा-कक्ष में विद्यार्थियों के विचारों, अनुभवों और मतों की सराहना तथा उन्हें जागरूक करने मात्र से काम नहीं चलेगा, बल्कि उन्हें कक्षा में परिवेश एवं समुदाय की तर्कसंगत आलोचना करने और प्रगतिशील परिवर्तन के लिए भी तैयार करना होगा।

पुस्तक के छठे अध्याय 'विद्यालय में समाज' में लेखक यह स्पष्ट करता है कि समाज, शिक्षार्थियों के दैनिक जीवन से जुड़े अनुभवों एवं ज्ञान के माध्यम से विद्यालय में प्रवेश करता है। इसलिए यदि कक्षा-कक्ष में शिक्षार्थियों के दैनिक अनुभवों, यथार्थ, विश्वासों, विचारों एवं मतों को प्रस्तुत करने हेतु परिस्थितियाँ निर्मित की जाती हैं, तो कक्षा में ज्ञान की निर्माणवादी संस्कृति विकसित होने लगती है। इस तरह के सांस्कृतिक परिवेश में शिक्षार्थी सामान्य सूचनाओं के संप्रेषण की अपेक्षा महत्वपूर्ण विचारों एवं परिप्रेक्ष्यों पर संवाद तथा विमर्श करना आरंभ कर देते हैं। जब कक्षा-कक्ष में अध्यापक, विद्यार्थियों को स्वयं के ज्ञान, भाषा और अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करता है तो कक्षा में एक ऐसी अधिगम पारिस्थितिकी निर्मित होती है जिसमें दैनिक जीवन से जुड़े ज्ञान तथा पुस्तकीय ज्ञान दोनों ही प्रासंगिक और महत्वपूर्ण हो जाते हैं। इस प्रक्रिया से विद्यार्थियों में 'अन्वेषण की संस्कृति' का विकास किया जा सकता है। अन्वेषण की संस्कृति द्वारा विद्यार्थियों को पुस्तकीय ज्ञान से संदर्भ-स्थापित ज्ञान की ओर, वैयक्तिक संज्ञान से सहभागी संज्ञान की ओर सूचना संग्रहण से आलोचनात्मक समझ की ओर बढ़ने के साथ-साथ कक्षा में सहभागिता एवं नई पहल के लिए अंतर्दृष्टि विकसित करने के अवसर प्राप्त होंगे।

निष्कर्ष

इस पुस्तक का लेखन, विद्यालय और समाज के अंतर्संबंधों को ज्ञान, पाठ्यचर्या और शिक्षणशास्त्रीय आयामों को ध्यान में रखते हुए किया गया है। इस पुस्तक में विद्यालय तथा विद्यालयेतर परिवेश में सीखने की प्रक्रियाओं की विस्तृत विवेचना की गई है। इस पुस्तक में उठाए गए शैक्षिक मुद्दे इस बात की पुष्टि करते हैं कि एक विद्यार्थी के रूप में समाज विद्यालय में प्रवेश करता है। अतः हम विद्यार्थी की आनुभविक दुनिया को संसाधन बनाकर, 'जिस समाज में रह रहे हैं' उसका आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकते हैं और 'जिस समाज में हम रहना चाहते हैं' उसकी परिकल्पना को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए विद्यार्थियों को सक्रिय अभिकर्ता के रूप में विकसित कर सकते हैं। इस प्रकार यह पुस्तक विद्यालय तथा समाज के आपसी संबंध और विद्यालयी ज्ञान निर्मिति में विद्यालयेतर अनुभवों की सक्रिय भूमिका को समझने का आधार प्रदान करती है।